साप्ताहिक
Live not just breaTHE

दि कार्मिक पोस्ट

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

वर्ष : 6, अंक : 20 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 6 जनवरी से 12 जनवरी 2021 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

चार राज्यों में बर्ड फ्लू की पुष्टि, केंद्र ने जारी किए निर्देश

एवियन इन्फ्लुएंजा (एआई) वायरस (बर्ड फ्लू) के बढ़ते प्रसार को देखते हुए केंद्र सरकार ने 6 जनवरी 2021 को बयान जारी किया। केंद्र सरकार ने कहा है कि अब तक चार प्रदेशों में एआई वायरस की पुष्टि हुई है।

सरकार की ओर से जारी बयान में कहा गया है कि राजस्थान के बारां, कोटा, झालावाड़ में कौओं, मध्य प्रदेश के मंदसौर, इंदौर, मालवा में कौओं, हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा में प्रवासी पक्षियों और केरल कोट्टायम, अल्लपुझा (4 महामारी केन्द्र) में बतख के पोल्ट्री से आईसीएआर-एनआईएचएसएडी ने संक्रमित नमूनों की पुष्टि की है।

पशुपालन और डेयरी विभाग, भारत सरकार ने भी नई दिल्ली में एक नियंत्रण कक्ष स्थापित किया है, ताकि स्थिति पर नजर रखी जा सकें और राज्य अधिकारियों द्वारा किए गए निवारक और नियंत्रण उपायों के आधार पर दैनिक स्थिति का पता लगाया जा सके।

एवियन इन्फ्लुएंजा के बारे में कार्य योजना के अनुसार प्रभावित राज्यों को इस बीमारी पर नियंत्रण और इसके प्रसार को रोकने के लिए किए जाने वाले उपायों के बारे में सुझाव दिए गए है। इस सुझावों में पोल्ट्री फार्मों की जैव सुरक्षा को मजबूत बनाना, प्रभावित क्षेत्रों का कीटाणुशोधन करना, मृत पक्षियों के शवों का उचित निपटान, बीमारी की पुष्टि और आगे निगरानी के लिए समय पर नमूने लेना और उन्हें परीक्षण के लिए भेजना।

संक्रमित पक्षियों से पोल्ट्री और मनुष्यों में बीमारी के प्रसार की रोकथाम के लिए सामान्य दिशा-निर्देशों के साथ-साथ निगरानी योजनाओं को सघन रूप से लागू करना शामिल है। राज्यों को यह भी सलाह दी गई है कि वे पक्षियों की असामान्य मौत के बारे में रिपोर्ट के लिए वन विभाग के साथ समन्वय स्थापित करें। अन्य राज्यों से भी पक्षियों की असामान्य मौत के बारे में सतर्कता बरतने और आवश्यक उपाय करने के लिए तुरंत रिपोर्ट करने की सलाह दी गई है।

हरियाणा में चार लाख से अधिक मुर्गियों की मौत, बर्ड फ्लू की आशंका

पड़ोसी राज्य राजस्थान और हिमाचल में पक्षियों के मौत के बाद हरियाणा में भी रहस्यमय तरीके से मुर्गियों की मौत हो रही है। बीते दस दिनों में हरियाणा के पंचकूला जिले के बरवाला क्षेत्र में करीब चार लाख मुर्गियों की मौत हो चुकी है। मुर्गियों के मौत का कारण बर्ड फ्लू माना जा रहा है, लेकिन अधिकारिक तौर पर गुरुवार सुबह तक पुष्टि नहीं हुई थी। लगातार मुर्गियों के मौत होने के बाद हरियाणा पशुपालन और डेयरी विभाग ने चिकन या अंडे खाने को लेकर एडवाइजरी जारी करते हुए अच्छी तरह पकाकर खाने और पॉल्ट्री फॉर्म के अंदर नहीं जाने की सलाह दी है। बुधवार को भी गांव गढ़ी कुटाह और गांव जलोली के पॉल्टी फार्म में करीब 20 हजार मुर्गियों की मौत हुई थी। लगातार मुर्गियों के मौत की घटना सामने आने के बाद पशुपालन एवं डेयरी विभाग की टीम ने सैंपल लिए है और जांच के लिए हिसार और सोनीपत भेजे गए है। बुधवार को मृत मुर्गियों के सैंपल क्षेत्रीय रोग निदान प्रयोगशाला (आरडीडीएल) जालंधर भी भेजा गया है। गुरुवार को आरआरडीएल की दो टीमें बरवाला क्षेत्र में पहुंचकर नमूने लेने का काम शुरू कर दिया है। आरआरडीएल की टीम ने दो सैंपल लिए है, एक सैंपल को भोपाल के राष्ट्रीय उच्च सुरक्षा पशु रोग संस्थान भेजा जाएगा। मुर्गीपालकों ने आशंका जताई है कि संदिग्ध बीमारियां रानीखेत या संक्रामक लारेंजो-ट्रैक्टिस हो सकती हैं। पंचकूला के उपायुक्त एमके आहूजा ने डाउन टू अर्थ को बताया कि जिले में करीब 80 लाख मुर्गियां है। जिसमें बुधवार शाम तक करीब 4,09,970 की मौत हुई है। जो सामान्य से कही ज्यादा है। इसकी सूचना पशुपालन एवं डेयरी विभाग को दी गई थी। आरआरडीएल की टीम ने सैंपल लेने के लिए आई हुई है। मुर्गियों के मौत का कारण रिपोर्ट आने के बाद ही बताया जा सकता है।

प्रेस सूचना ब्यूरो की ओर से जारी विज्ञप्ति में बताया गया है कि एवियन इन्फ्लुएंजा (एआई) वायरस सदियों से पूरी दुनिया में मौजूद है। पिछली शताब्दी में इसके चार बड़े प्रकोप दर्ज हुए हैं। भारत में एवियन इन्फ्लुएंजा का पहला प्रकोप 2006 में अधिसूचित किया गया था। भारत में मनुष्यों में अभी तक इसके संक्रमण का पता नहीं चला है, हालांकि यह बीमारी जूनोटिक है।

इस बात का ऐसा कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिला है कि प्रदूषित पोल्ट्री उत्पादों की खपत के माध्यम से एआई का वायरस मनुष्यों को संक्रमित कर सकता है। जैव सुरक्षा सिद्धांतों, व्यक्तिगत स्वच्छता और साफ-सफाई तथा कीटाणुशोधन प्रोटोकॉल को शामिल करते हुए प्रबंधन प्रक्रियाओं को लागू करने के साथ-साथ खाना पकाने और प्रसंस्करण मानकों को अपनाना एआई वायरस के प्रसार को नियंत्रित करने के प्रभावी साधन हैं।

भारत में, यह बीमारी मुख्य रूप से प्रवासी पक्षियों द्वारा फैलती है, जो सर्दियों के महीनों यानी सितंबर-अक्टूबर से फरवरी से मार्च तक भारत में आते हैं। इसके द्वितीयक प्रसार में मानव रखरखाव (फोमाइट्स के माध्यम से) के योगदान को भी खारिज नहीं किया जा सकता है।

एआई के वैश्विक प्रसार की चुनौती को देखते हुए भारत सरकार के पशुपालन और डेयरी विभाग (डीएएचडी) ने 2005 में एक कार्य योजना तैयार की थी, जिसे देश में एवियन इन्फ्लुएंजा की रोकथाम और नियंत्रण के लिए राज्य सरकारों के मार्गदर्शन हेतु वर्ष 2006, 2012, 2015 और 2021 में संशोधित (देखें डीएएचडी वेबसाइट) किया गया था।

वर्ष 2020 में एवियन इन्फ्लुएंजा के प्रकोप पर नियंत्रण पूरा होने के बाद पोस्ट ऑपरेशन सर्विलांस प्लान (पीओएसपी) का अनुपालन करते हुए 30 सितम्बर, 2020 से देश को एआई से मुक्त होने की घोषणा की गई थी।

जलवायु से जुड़ी आपदाओं के चलते 2050 तक अपना घर छोड़ने को मजबूर हो जाएंगे 4.5 करोड़ भारतीय

जलवायु संकट एक ऐसा खतरा है जिसे और नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। इसकी कीमत आज सारी दुनिया भुगत रही है। भारत जैसे देशों में जहां आज भी बड़ी आबादी गरीबी और भुखमरी का शिकार है। वहां यह समस्या और गंभीर रूप लेती जा रही है। इसी समस्या का एक पहलु एक्शन ऐड द्वारा प्रकाशित नई रिपोर्ट 'कॉस्ट ऑफ क्लाइमेट इनएक्शन' में सामने आया है। इसके अनुसार 2050 तक भारत के 4.5 करोड़ से ज्यादा लोग जलवायु से जुड़ी आपदाओं के चलते अपना घर छोड़ने के लिए मजबूर हो जाएंगे। यह आंकड़ा वर्तमान से करीब 3 गुना ज्यादा है।

रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान में सूखा, समुदी जलस्तर के बढ़ने, जल संकट, कृषि और इकोसिस्टम को हो रहे नुकसान जैसी आपदाओं के चलते देश में 1.4 करोड़ लोग पलायन करने को मजबूर हैं। गौरतलब है कि इन आंकड़ों में बाढ़, तूफान जैसी आपदाओं से होने वाले प्रवास को नहीं जोड़ा गया है, वर्ना यह आंकड़ा इससे कई गुना ज्यादा होता, क्योंकि यह देश बड़े पैमाने पर बाढ़ और तूफान जैसी अचानक आने वाली त्रासदियों का दंश झेल रहे हैं।

पश्चिम बंगाल सरकार की एक रिपोर्ट से पता चला है कि 2019 में आए 'बुलबुल' तूफान के चलते भारत में 35.6 लाख लोग प्रभावित हुए थे। इस आपदा में करीब 5 लाख घर नष्ट हुए थे। इससे करीब 15 लाख हेक्टेयर फसल बर्बाद हो गई थी, जबकि 13,286 मवेशियों की मौत हो गई थी। जबकि मछलीपालन को करीब 735 करोड़ रुपए का नुकसान हुआ था।

इस त्रासदी में यदि भारत के साथ दक्षिण एशिया के अन्य 4 देशों (बांग्लादेश, पाकिस्तान, नेपाल और श्रीलंका) को भी जोड़ दें तो इन आपदाओं चलते बेघर होने वाले लोगों का आंकड़ा 2020 में बढ़कर 1.8 करोड़ हो जाएगा। वहीं 2050 तक तापमान में हो रही वृद्धि को 3.2 डिग्री सेल्सियस पर रोकने में नाकाम रहते हैं तो यह आंकड़ा बढ़कर 6.3 करोड़ पर पहुंच जाएगा।

2050 तक अर्थव्यवस्था को होगा 7 से 13 फीसदी का नुकसान

दक्षिण एशिया के इन पांच देशों की बड़ी आबादी कृषि और मछलीपालन पर निर्भर है, जोकि उनके भोजन और आय का मुख्य स्रोत हैं। विश्व बैंक द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार नेपाल के 65 फीसदी, भारत के 41 फीसदी, बांग्लादेश के 38 फीसदी, पाकिस्तान के 36 फीसदी और श्रीलंका के 24 फीसदी श्रमिक कृषि कार्यों में लगे हुए हैं। इन देशों में खेती काफी हद तक जलवायु पर निर्भर है। ऐसे में यदि सूखा पड़ता है या बाढ़ आती है तो उसका खामियाजा सबसे ज्यादा कृषि को ही उठाना पड़ता है। भारत के 60 फीसदी खेतों की सिंचाई बारिश पर निर्भर हैं, ऐसे में यदि कृषि को नुकसान होता है तो उसका बोझ पहले से ही गरीबी में जी रहे किसानों पर बहुत ज्यादा पड़ता है।

इस वर्ष मैकिंसे ग्लोबल इंस्टीट्यूट द्वारा किए एक शोध से पता चला है कि यदि जलवायु परिवर्तन को रोकने की दिशा में कोई ठोस कदम न उठाए गये तो 2050 तक दक्षिण एशियाई देश अपने जीडीपी का 2 फीसदी खो देंगे। जो सदी के अंत तक बढ़कर 9 फीसदी हो जाएगा। इसमें जलवायु से जुड़ी चरम आपदाओं से होने वाले नुकसान को नहीं जोड़ा गया है, वरना यह आंकड़ा इससे कहीं अधिक होता। अन्य अनुमानों से पता चला है कि जलवायु से जुड़ी आपदाओं का सबसे ज्यादा असर दक्षिण एशिया के गरीब तबके पर होगा। जलवायु से जुड़ी आपदाओं के चलते 2050 तक इन देशों की जीडीपी को 7 से 13 फीसदी के नुकसान का अनुमान लगाया गया है।

आंकड़ें दिखाते हैं कि 1998 से 2017 के बीच बाढ़, सूखा, तूफान, हीटवेव, सुनामी जैसी आपदाओं के चलते 5,85,176 करोड़ रुपए (7,950 करोड़ डॉलर) का नुकसान हुआ था। एडीबी द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार सदी के अंत तक इन आपदाओं से निपटने के लिए दक्षिण एशियाई देशों को हर वर्ष अपनी जीडीपी के करीब 0.86 फीसदी हिस्से को खर्च करना होगा।

यह संकट महिलाओं के लिए कहीं ज्यादा भारी होगा। दक्षिण एशिया में जहां 50 फीसदी से ज्यादा महिला श्रमिक या तो खेती में लगी हैं या फिर अपने घर से जुड़ी जिम्मेदारियों को निभा रही हैं, जिसके लिए उन्हें कोई मेहनताना नहीं मिलता। ऐसे में यदि फसल को नुकसान होता है या फिर परिवार को पलायन करना पड़ता है तो उनपर कहीं ज्यादा दबाव पड़ता है। साधनों के आभाव में पलायन करने वाले परिवार का या तो अपनी जमीन जायदाद बेचनी पड़ती है या फिर कर्ज लेना पड़ता है जोकि उन्हें गरीबी और कर्ज के भंवर जाल में फंसा देता है।

कौन हैं इन सबके लिए जिम्मेदार

रिपोर्ट के अनुसार अब तक हुए उत्सर्जन में दक्षिण एशिया का 5 फीसदी से कम हिस्सा है, जबकि वह दुनिया की एक चौथाई आबादी का घर है जो बड़े पैमाने पर जलवायु से जुडी आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, तूफान आदि का असर झेल रही है।

यदि 1990 से 2015 के आंकड़ों पर गौर करें तो दुनिया के 10 फीसदी अमीरों ने करीब 52 फीसदी उत्सर्जन किया था। जबकि इसके विपरीत गरीब तबके की 50 फीसदी आबादी केवल 7 फीसदी उत्सर्जन के लिए जिम्मेवार है। यह गरीब तबका आज भी रोज 400 रुपए (5.5 डॉलर) से कम पर अपना जीवन बसर कर रहा है। यदि सिर्फ दक्षिण एशिया की बात करें तो वहां की 80 फीसदी आबादी इसी वर्ग से सम्बन्ध रखती है। जबकि अमीर तबके की 50 फीसदी आबादी उत्तरी अमेरिका और यूरोपियन यूनियन से सम्बन्ध रखती है। वहीं इसमें 20 फीसदी लोग चीन और भारत के हैं।

उत्सर्जन का यह अंतर कितना बड़ा है इसे इस बात से समझा जा सकता है कि एक औसत अमेरिकी, एक औसत नेपाली की तुलना में करीब 51 गुना ज्यादा उत्सर्जन करता है।

अंतराष्ट्रीय संस्था ऑक्सफेम द्वारा जारी एक रिपोर्ट के अनुसार क्लाइमेट फाइनेंस के नाम पर अमीर देशों और विभिन्न संस्थानों द्वारा विकासशील देशों को करीब 4,40,637 करोड़ रुपए (60 बिलियन डॉलर) का वित्त दिया गया था, पर सच्चाई यह है कि उन देशों के पास इसका करीब एक तिहाई ही पहुंच पाया था। जबकि बाकि का पैसा ब्याज, पुनर्भुगतान और अन्य लागतों के रूप में काट दिया गया था।

अनुमान है कि 2017-18 के दौरान केवल 1,39,535 से 1,65,239 करोड़ रुपए (19 से 22.5 बिलियन डॉलर) की राशि ही इन देशों तक पहुंच पाई थी। गौरतलब है कि 2020 तक अमीर राष्ट्रों ने हर वर्ष 7,34,395 करोड़ रुपए (100 बिलियन डॉलर) विकासशील देशों को क्लाइमेट फाइनेंस के रूप में देने का समझौता किया था।

वहीं संयुक्त राष्ट्र और ओईसीडी के आंकड़ों पर आधारित इस रिपोर्ट के अनुसार क्लाइमेट फाइनेंस के रूप में दिया गया करीब 80 फीसदी पैसा कर्ज के रूप में था, जोकि करीब 3,45,166 करोड़ रुपए (47 बिलियन डॉलर) था। जबकि इसमें से करीब आधा 176,254 करोड़ रुपए (24 बिलियन डॉलर) गैर-रियायती था। जिसका मतलब है कि यह ऋण कड़ी शर्तों पर दिया गया था। ऐसे में यह कर्ज उन देशों के लिए और भारी साबित होगा।

क्या है समाधान

ऐसे में इस समस्या का क्या समाधान है यह चिंतन का विषय है। सबसे पहले तो पैरिस समझौते के लक्ष्यों को हासिल किया जाना चाहिए, जिससे उत्सर्जन में कटौती की जा सके और जलवायु में आ रहे बदलावों एवं तापमान में हो रही वृद्धि को रोका जा सके। साथ ही अमीर देशों को क्लाइमेट फाइनेंस में ज्यादा से ज्यादा योगदान करना चाहिए । जिससे जलवायु परिवर्तन की मार झेल रहे देशों की ज्यादा से ज्यादा मदद की जा सके।

विकसित देशों को कर्ज के बजाय क्लाइमेट फाइनेंस अनुदान के रूप में अधिक देना चाहिए। साथ ही जलवायु संकट से निपटने को वरीयता देनी चाहिए। जिसमें कमजोर देशों को अधिक प्राथमिकता मिलनी चाहिए। कृषि क्षेत्र में सुधार करने की जरुरत है जिससे होने वाले नुकसान को सीमित किया जा सके। गरीब तबके के लोगों को सामाजिक आर्थिक सुरक्षा देनी चाहिए। जिससे इन आपदाओं के समय भी वो अपने आप को सुरक्षित रख सकें और एक अच्छा जीवन व्यतीत कर सकें।

जलवायु परिवर्तन के चलते दुनिया भर के शहरों में घट जाएगी नमी

अंतराष्ट्रीय जर्नल नेचर क्लाइमेट चेंज में छपे एक शोध से पता चला है कि जलवायु परिवर्तन के चलते दुनिया भर के शहरों में नमी की मात्रा घट जाएगी। अनुमान है कि सदी के अंत तक यदि उत्सर्जन में वृद्धि जारी रहता है तो तापमान में 4.4 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो सकती है।

शहर जोकि धरती के केवल तीन फीसदी हिस्से पर फैले हैं, पर उनमें विश्व की 50 फीसदी से ज्यादा आबादी रहती है, जो 2050 तक बढ़कर 70 फीसदी पर पहुंच जाएगी। एक ही जगह पर आबादी का जमावड़ा कई समस्याओं को भी जन्म दे रहा है। इसमें गर्मी से बढ़ता तनाव, पानी की कमी, वायु प्रदूषण और ऊर्जा की कमी जैसी समस्याएं प्रमुख हैं।

दुनिया भर में जलवायु परिवर्तन के असर को समझने के लिए कई मॉडल विकसित किए गए हैं। इस शोध से जुड़े शोधकर्ताओं का मानना है कि उन मॉडलों को बड़े स्तर पर विश्लेषण करने के लिए तैयार किया गया है। इन्हें शहरों को ध्यान में रखकर नहीं तैयार किया गया है। लेकिन इस नए शोध में शोधकर्ताओं ने शहरों पर जलवायु परिवर्तन के असर को करीब से समझने के लिए पारम्परिक क्लाइमेट मॉडल के साथ-साथ आंकड़ों पर आधारित स्टैटिस्टिकल मॉडल का भी प्रयोग किया है। जिसे विशेष तौर पर शहरों को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है।

इस शोध से जुड़े प्रमुख शोधकर्ता ली झाओ के अनुसार शहरों में सतह कंक्रीट और डामर की बनी होती है, जो कच्ची जमीन की तुलना में बहुत अधिक गर्मी को सोखती है और उसे बनाए रखती हैं। ऐसे में वातावरण बहुत तेजी से गर्म होता है और नमी खो देता है। ऊपर से घटते पेड़ इस हीट आइलैंड की समस्या को और बढ़ा रहे हैं। यही वजह है कि शहरों में तापमान कहीं ज्यादा तेजी से बढ़ रहा है। अनुमान है कि शहरों का तापमान अपने आस-पास के ग्रामीण इलाकों से 4 से 5 डिग्री सेल्सियस तक ज्यादा होता है।

क्या है इस समस्या का समाधान

इस मॉडल से पता चला है कि यदि शहरों में ग्रीन इन्फ्रास्ट्रक्चर पर ध्यान दिया जाए तो वह भविष्य के लिए एक अच्छा निवेश होगा। पेड़-पौधे वातावरण में नमी बरक़रार रखते हैं। यह ने केवल प्रदूषण को कम करते हैं साथ ही तापमान को कम करने के साथ-साथ हवा को भी ठंडा करते हैं। मॉडल से पता चला है कि अगली सदी में तट से दूर शहरों की हवा खुश्क हो जाएगी ऐसे में यह पेड़ पौधे और ग्रीन इंफ्रास्ट्रक्चर जलवायु परिवर्तन से निपटने में बहुत मददगार होंगे।

ऐसे में झाओ को उम्मीद है कि यह मॉडल शहरों में बढ़ते तापमान से निपटने में मदद करेगा। साथ ही शहरी योजनाकारों और नीति निर्माताओं को भविष्य को ध्यान में रखकर योजना तैयार करने में मददगार होगा।

अमेरिका की सबसे बड़ी पर्यावरणीय एजेंसी 4 साल बाद पटरी पर लौटेगी

अमेरिका के नवनिर्वाचित राष्ट्रपति जो बाइडन ने अमेरिका की सबसे महत्वपूर्ण पर्यावरण एजेंसी यानी पर्यावरण संरक्षण एजेंसी (ईपीए) को एक बार फिर से पटरी पर लाने के लिए कमर कसी है। यह एजेंसी डोनाल्ड ट्रंप के शासन काल में पूरी तरह से पटरी से उतर गई थी।

ध्यान रहे कि ट्रंप प्रशासन ने जलवायु परिवर्तन को पूरी तरह से मानने से इंकार कर दिया था। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि ट्रंप प्रशासन ने इस एजेंसी को पूरी तरह से न केवल नकार दिया था बल्कि एजेंसी के वैज्ञानिकों की बातों को पूरी तरह से अपने शासन काल के दोरान खारिज कर दिया था।

इतना ही नहीं, एजेंसी के वैज्ञानिकों के मनोबल को भी पूरी तरह से तोड़ने की हर संभव कोशिश ट्रंप प्रशासन द्वारा की की गई थी। लेकिन अब नए राष्ट्रपति ने जिस प्रकार से अनुभवी पर्यावरण विनियामक(रेगुलेटर) माइकल रेगन को ईपीए के प्रमुख पद पर नियुक्त किया है, इससे दुनियाभर के वैज्ञानिकों की आशा बलवती हो चली है कि बाइडन प्रशासन हर हाल में जलवायु परिवर्तन के लिए कटिबद्ध है और भविष्य में भी रहेगा। बाइडन के इस कदम से अमेरिका सहित पूरी दुनिया के वैज्ञानिकों के बीच विश्वास बढ़ा है।

ध्यान रहे कि माइकल रेगन पर्यावरण संरक्षण एजेंसी का नेतृत्व करने वाले पहले अश्वेत नागरिक होंगे। अमेरिकी राष्ट्रपति बाइडन ने देश के पर्यावरण संरक्षण एजेंसी का नेतृत्व करने के लिए उत्तरी कैरोलिना के शीर्ष पर्यावरण नियामक माइकल रेगन को नामित किया है। रेगन की नियुक्त के बाद इस बात की चर्चा जोरों पर है कि क्या बाइडन के इस कदम से उनके अपने क्रांतिकारी जलवायु परिवर्तन के एजेंडे के नतीजे और कितने प्रभावी ढंग से क्रियान्वयन होंगे।

इस संबंध में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में जलवायु नीति की शोधकर्ता लेह स्टोक्स कहती हैं कि इससे पता चलता है कि बाइडन टीम वास्तव में उन साहसिक जलवायु प्रतिबद्धताओं का पालन करने जा रही है, जिसके बारे में वे अब तक

केवल बोल रहे थे। वह कहती हैं कि वास्तव में यह एक विशाल राजनीतिक बदलाव है।

यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि रेगन ने पूर्व राष्ट्रपति बिल क्लिंटन और जॉर्ज डब्ल्यू बुश के शासन काल क दौरान ईपीए के वायु-गुणवत्ता विभाग में काम करते हुए नौ साल से अधिक समय बिताया था। पिछले चार साल से वे उत्तरी कैरोलिना के पर्यावरण गुणवत्ता विभाग का नेतृत्व किया है, जहां उन्होंने रासायनिक और ऊर्जा क्षेत्र में सुधार के लिए कई कार्यक्रम चलाए। जलवायु परिवर्तन पर बोलते हुए रेगन ने कहा कि जलवायु परिवर्तन मानवता के लिए सबसे महत्वपूर्ण चुनौती है। हम हर आवाज को अपने युवाओं और अग्रिम पंक्ति के समुदायों व वैज्ञानिकों को साथ लेकर एक सार्थक प्रगति करेंगे। मैं ईपीए प्रशासक के रूप में इस काम का हिस्सा बनने के लिए गर्व महसूस कर रहा हूं।

ट्रंप के चार साल के शासन काल में पूरी तरह से ध्वस्त हो चुकी यह पर्यावर्णीय एजेंसी रेगन को विरासत में मिलेगी। ट्रंप प्रशासन ने एजेंसी में वैज्ञानिकों को दरकिनार कर दिया था और पर्यावरण व सार्वजनिक-स्वास्थ्य सुरक्षा के पैमाने बनाने के प्रयासों में वैज्ञानिक प्रमाणों की पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया था। हालांकि विशेषज्ञों का कहना है कि ऐसी विषम परिस्थितियों में रेगन को काम करने का अनुभव है। क्योंकि 2017 में उन्हें जब नवनिर्वाचित डेमोक्रेटिक गवर्नर रॉय कूपर ने उत्तरी कैरोलिना के पर्यावरण गुणवत्ता विभाग में शामिल किया था, तब कमोबेश कुछ ऐसी ही परिस्थितियां थीं। वर्जीनिया के अर्लिंगटन के पर्यावर्णीय सलाहकार जेरेमी साइमन कहते हैं कि रेगन एजेंसी का न केवल पुनर्निर्माण करने में सफल होंगे बल्कि अमेरिका में कोयला-आधारित बिजली संयंत्रों से अवशिष्ट कोयला-राख कचरे के रासायनिक विनियमन और निपटान के लिए राज्य की प्रक्रियाओं में सुधार करने में भी सक्षम साबित होंगे। वह कहते हैं कि रेगन बतौर प्रशासक ट्रंप के चार वर्षों के दौरान हुई क्षति को ठीक करने में भी सफल होंगे। अमेरिकियों के सामने आने वाले जलवायु परिर्वन संकट और स्वास्थ्य संकट से निपटने में भी रेगन को अपनी पूरी काबिलियत का प्रदर्शन करना होगा। वाशिंगटन डीसी में पर्यावरण संरक्षण नेटवर्क के एक संगठन जिसे ट्रंप ने ईपीए के खिलाफ बोलने के लिए बनाया था, उसने भी रेगन की नियुक्ति पर समर्थन व्यक्त किया है और कहा है कि रेगन के सामने लोगों के स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन एक बड़ी पर्यावरणीय चुनौती मंहुबाय खड़ी है। रेगन से पर्यावरण न्याय पर जोर देने की उम्मीद की जाती है, ताकि गरीब और कम प्रतिनिधित्व वाले समुदायों की रक्षा की जा सके जो प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन से असमान रूप से प्रभावित हैं। रेगन ने उत्तरी कैरोलिना में इन मुद्दों के लिए राज्य का पहला पर्यावरण न्याय और इक्विटी सलाहकार बोर्ड बनाया था। ध्यान रहे कि बाइडन ने राष्ट्रपति चुनाव अभियान के दौरान पर्यावरणीय न्याय पर काफी जोर दिया था और वंचित समुदायों और जलवायु योजना में कुल बजट का 40 प्रतिशत निवेश करने का वादा किया था। रेगन के अब तक के कामों को देखा जाए तो वे अब वाहनों और उद्योग से ग्रीनहाउस-गैस उत्सर्जन को सीमित करने और जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने की बाइडन रणनीति को सफल बनाने की हर मुमकीन कोशिश करेंगे। ध्यान रहे कि बाइडन का जलवायु एजेंडा व्यापकता लिए हुए है। उन्होंने स्वच्छ ऊर्जा उत्पादन में तेजी लाने, कम कार्बन बुनियादी ढांचे का विस्तार करने और 2035 तक बिजली क्षेत्र से शून्य ग्रीनहाउस-गैस उत्सर्जन तक पहुंचने के लिए अपने को प्रतिबद्ध किया है।

कार्बन डाइ आक्साइड उत्सर्जन में पहले नंबर पर है पश्चिम बंगाल

सीएसई ने कोयला आधारित बिजली खरीद का राज्यवार आकलन और विश्लेषण किया और इसमें पाया कि पश्चिम बंगाल सल्फर के अनुपालन में देश में सबसे फिसड्डी राज्य है। और प्रदूषित कोयला खरीद कर बिजली उत्पादन में नंबर एक राज्य है।

सीएसई द्वारा किए गए अध्ययन के अनुसार राज्य में बिजली की आपूर्ति करने वाले अधिकांश स्टेशनों ने केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा अधिसूचित दिसंबर, 2015 के सल्फर डाइऑक्साइड मानदंडों के अनुपालन के लिए पर्याप्त उपाय नहीं किए हैं।

इस संबंध में सीएसई के औद्योगिक प्रदूषण कार्यक्रम के निदेशक निवित कुमार यादव कहते हैं, 卐कोयला आधारित बिजली स्टेशनों में तीन प्रमुख प्रदूषक हैं- कण पदार्थ, नाइट्रोजन ऑक्साइड और सल्फर डाइऑक्साइड का उत्सर्जन होता है। पावर स्टेशन सल्फर डाइऑक्साइड मानदंड के अनुपालन में विशेष रूप से पिछड़ गए हैं।

ध्यान रहे कि पहले से ही सल्फर डाई आक्साइड के मानदंडों को कमजोर करने के लिए दबाव बना हुआ है। दिसंबर, 2015 में केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने कण पदार्थ, नाइट्रोजन ऑक्साइड और सल्फर डाइऑक्साइड के उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए एक निश्चत मानदंड निर्धारित किया हुआ है, लेकिन केंद्रीय ऊर्जा मंत्रालय इस मानदंड में और छूट देने की मांग कर रहा है।

यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि बिजली संयंत्रों से सल्फर डाइऑक्साइड का उत्सर्जन भारत में आधे से अधिक मानवजनित उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार हैं। सीएसई ने अपने मूल्यांकन में राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को उनके बिजली उत्पादन के प्रतिशत के आधार पर श्रेणी प्रदान की है। 33 राज्य व केंद्र शासित प्रदेशों द्वारा कोयला आधारित बिजली संयंत्रों से ही बिजली खरीदी जाती है।

प्रदूषित कोयला खरीद कर बिजली उत्पादन के मामले में पश्चिम बंगाल देश में पहले स्थान पर है। इसका मतलब है कि यह राज्य सबसे अधिक कार्बन डाई आक्साइड उत्सर्जित कर के मामले में देश में पहले पर नंबर है। यह खुलासा सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट (सीएसई) ने किया है।

इन राज्यों के पास विभिन्न कोयला-फायरिंग पावर जनरेटर के साथ टाई-अप है जो विभिन्न राज्यों में भी स्थित हैं। सीएसई ने बिजली मंत्रालय की वेबसाइट से आंकड़ों को लेकर आकलन किया है कि किसी विशेष राज्य द्वारा कितनी क्लीन बिजली खरीदी जा रही है।

सीएसई ने अपने अध्ययन में पाया कि देश के नौ राज्य प्रमुख रूप से सरकारी मापदंडों को पालन में चूक कर रहे हैं। यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि राज्य अपनी कोयले पर आधारित बिजली का लगभग 60 प्रतिशत अशुद्ध स्रोतों से खरीद रहे हैं।

इस मामले में पश्चिम बंगाल, तेलंगाना और गुजरात शीर्ष पर हैं। पश्चिम बंगाल में राज्य को बिजली की आपूर्ति करने वाले 84 प्रतिशत बिजली स्टेशन अशुद्ध हैं और सल्फर डाइऑक्साइड के मानदंडों को पूरा करने से बहुत दूर हैं।

पश्चिम बंगाल अपने बिजली स्टेशनों के माध्यम से अपनी जरूरत की सभी बिजली उत्पन्न करता है। इसलिए राज्य में नियामक अधिकारियों के पास प्रदूषण को कम करने के लिए आवश्यक शक्तियां हैं।

तेलंगाना में यह आंकड़ा 74 प्रतिशत है और गुजरात में यह 71 फीसदी है। इन राज्यों में स्थित और आपूर्ति करने वाले अधिकांश पावर स्टेशनों ने मानदंडों को बहुत कम पूरा किया है।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008